श्री गुरु कृपा
से

प्रभु-दर्शन

श्री १०८ गुरु महाराज के प्रति
सप्रेम भेंट

साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम
संन्यास रोड, कनखल
हरिद्वार, उत्तराखण्ड

प्रथम संस्करण - गुरु पूर्णिमा - 1968 (आनन्दी देवी, झाँसी)
द्वितीय संस्करण - जन्म दिवस - 2016 (श्रीमती कृष्णा भण्डारी)
(स्वामी जी की 100वीं जन्म शताब्दी पर)

2000 प्रतियाँ

मूल्य: सप्रेम भेंट

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशक
साधना परिवार
स्वामी रामानन्द साधना धाम
संन्यास रोड, कनखल
हरिद्वार, उत्तराखण्ड

मुद्रक
रैक्मो प्रैस प्राईवेट लिमिटेड
सी-59, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-1
नई दिल्ली-110020

प्रकाशकीय

साधकों के संस्मरण अध्यात्म मार्ग में जिज्ञासा उत्पन्न करने और उसमें प्रवृत्त होने की प्रेरणा देने का अनमोल साधन है। इसी बात को ध्यान में रखते हुये हम श्रीमती आनन्दी देवी जी के अनुभवों को आपके लिये प्रस्तुत कर रहे हैं। सद्गुरु पूज्य स्वामी श्री रामानन्द जी महाराज के सान्निध्य को आनन्दी देवी जी ने कैसे पाया, कैसे गुरुदेव ने उन्हें अपनाया और संभाला, क्या-क्या अनुभूतियाँ उन्हें हुईं, इन सबको पढ़कर हमारी श्रद्धा पुष्ट हो, और हमें अपनी आध्यात्मिक यात्रा में स्वामी जी प्रेषित करते रहें तो बहन आनन्दी देवी जी का लिखना धन्य हो जायेगा। प्रभु हमें अपने मार्ग पर चलने की शक्ति और उत्साह देते रहें।

हमें आशा है कि सब साधकगण इस पुस्तक को पढ़कर लाभान्वित होंगे। हम श्री रमेश चन्द्र गुप्त, श्री सतीश अग्रवाल, श्रीमती रमन सेखड़ी एवं रैक्मो प्रेस के श्री राकेश और मुकेश भार्गव के अत्यन्त आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन में अपना योगदान दिया।

ओम प्रकाश सेखड़ी
अध्यक्ष, साधना परिवार

प्रथम संस्करण

प्रस्तुत पुस्तक की लेखिका मेरी परम पूज्य बहन आनन्दी देवी को हमारे पूज्य पिता छोटेलाल तथा माता श्रीमती श्यामा देवी श्रीवास्तव खरे की उत्तम शिक्षाओं ने ही विषम परिस्थितियाँ होते हुये भी उनमें साहस का संचार किया है। उन्होंने कभी सन्तुलन नहीं खोया और युवावस्था में भी वे भक्ति मार्ग की ओर अग्रसर रहीं।

उन्हें चित्रकूट और भरत कूप में अपने पतिदेव श्री बनवारी लाल श्रीवास्तव के साथ, जो पोस्ट आफिस विभाग में थे, रहने का अवसर प्राप्त हुआ। अतः धार्मिक स्थान में रहने के कारण उन पर भक्ति- भावनाओं का संचार होना स्वाभाविक ही था। पतिदेव की बदली झाँसी होने के साथ ही उनके भाग्य का उदय हुआ। उनके दो पुत्र बाँके बिहारी लाल स्टेट बैंक में तथा कुँज बिहारी लाल पोस्ट ऑफिस में नौकर हो गये और साथ ही बच्चों ने गायन कला में झाँसी तथा अन्य शहरों में कई पदक प्राप्त करके अच्छी ख्याति पाई। कुछ समय के उपरान्त उन्होंने उन्नाव दरवाजा झाँसी में एक कोठी स्वयं खरीदी। ईश्वर के प्रति बहनजी की प्रगाढ़ श्रद्धा होने से उन्होंने कई बार राम नाम लिखने का संकल्प पूरा किया। भाग्यवश उनको श्री 108 स्वामी श्री सत्यानन्द महाराज के शिष्य श्री 108 स्वामी रामानन्द महाराज के दर्शनों का सुअवसर प्राप्त हुआ। और वे उनकी शिष्या बन गईं। गुरु की कृपा विशेष होने से निरन्तर प्रभु मार्ग पर अग्रसर होती रहीं।

इस पुस्तक को अपने अनुभव एवं स्मरण शक्ति से धीरे धीरे परिश्रम करके स्वयं की भाषा में लिखा। उनकी भाषा धारा प्रवाह तो नहीं है क्योंकि स्त्री शिक्षा पिछले जमाने में नहीं के बराबर थी। फिर भी पुस्तक इसी आशय को लेकर प्रकाशित की गई है कि सभी को गुरुदेव की शिक्षाओं का मार्ग दर्शन प्राप्त हो और पुस्तक उसी दिशा में लाभदायक हो सकती है जबकि उनका अनुसरण किया जाये।

यदि पाठकों ने प्रस्तुत पुस्तक की शिक्षाओं का अनुसरण किया तो लेखिका अपने को धन्य समझेगी।

राम बिहारी खरे
लघु भ्राता आनन्दी देवी

द्वितीय संस्करण

श्रीमती कृष्णा भण्डारी जी की ओर उनके पति
स्वर्गीय श्री उग्रसेन भण्डारी जी की याद में सप्रेम समर्पित।
श्री उग्रसेन भण्डारी जी स्वामी जी के चचेरे भाई थे।

ऐ पथ गामी।
पग धीरे धीरे धरना।
विषम भूमि, अपरिचित मग में।
सोच समझ कर चलना।
ऊँचे में है,
और ऊँचे से ऊँचे में है।
दूर दूर अति दूर, लक्ष्य तो दूरी में है।
पर न मचलना, व्याकुल होना,
धीरज धर, धीरे से चलना।
प्यारे पहचान,
जीवन के धन को,
आगे ले जाने वाले अमृतपन को
पराशक्ति के अवलम्बन को
मग में न अटकना
हे पथ गामी,
पग धीरे धीरे धरना।

स्वामी रामानन्द

॥ प्रभु दर्शन ॥

इस दासी को गुरुदेव की प्राप्ति की उत्कण्ठा थी। प्रभु जी ने स्वयं ही दर्शन दिये। दासी पर कृपा करी।

जाड़े के दिन थे। दिसम्बर का महीना था। स्वामी जी साधक विश्नोई जी के यहाँ झाँसी आये थे। गीता मन्दिर में स्वामी जी के प्रवचन हुये थे। सारी झाँसी में हलचल मची थी। मैंने भी सुना कि बहुत ऊँचे महात्माजी आए हैं। जैसे ही मैंने सुना मेरे मन में दर्शनों की उत्कंठा होने लगी। मैने बड़े लड़के से पूछा कि तुम्हारे बैंक में स्वामी जी आए हैं। मुझे दर्शन करा लाओ उसने उत्तर दिया मैं अपने साथ नहीं ले जाऊँगा। वह महात्मा जी बहुत ऊँचे हैं। उनके बड़े बड़े अफसर साधक शिष्य हैं। हम लोगों से बात कैसे करेंगे। तुम घूँघट मारकर वहाँ बैठोगी। अफसरों के आगे तुम कहाँ जाओगी। इतना सुन के मैं मन मार कर रह गई। सारी रात नींद नहीं आई। मन यही हो रहा था कि कोई दर्शन को ले चले। प्रभु को अपनी ओर खींचना ही था। भगवान तो सच्चा प्रेम देखते ही हैं। भक्तों की रुचि देखने वाले प्रभु अन्तर्यामी भक्तों में रुचि रखते हैं। कैसे-कैसे मिलने के संयोग बना देते हैं। उस प्रभु की लीला अपरम्पार है। मैं मन में तड़फ रही थी। भगवान, यदि मेरे पंख होते तो मैं उड़कर अपने राम से मिल आती। मैं तड़फ रही थी जैसे बिना पानी की मछली तडफड़ाती है। इसी भाँति मेरी दशा थी। उसी दिन एकाएक भाई के यहाँ से निमन्त्रण आया, मैं भाई के यहाँ गई। भोजन करते करते रात्रि अधिक हो गई। रात अधिक होने के कारण भाई ने रोक लिया, सवेरे इतवार था। मैंने भाई से पूछा कि आप महात्मा जी के

दर्शन कर आये उन्होंने कहा कि चलो दर्शन आपको करा लायें। इतना सुनते ही मैं प्रसन्न होकर तैयार हो गई। मेरे आनन्द की सीमा न रही। अन्धे को दो आँखें मिल गईं। हमें कुबेर का खजाना मिल गया। प्रभु ने मिलने की गली बता दी। मैं इस प्रकार भगवान की कृपा देखकर खुश होने लगी। दर्शनों को आँखें प्यासी थीं। मैं गीता मन्दिर गई। पहुँचते ही गुरुदेव की माधुरी मूर्ति देखी। मैं स्वामी जी की ओर खिंच गई। जैसे चुम्बक लोहे को खींच लेता है। गुरुदेव का तेज जैसे सूर्य का प्रकाश। प्रेम में मन प्रसन्न हो गया। मुझे ऐसा लगा जैसे महानिधि मिल गई हो। कोमल शरीर-कर कमलों को देखकर मन में अनेकों तरंगें उठने लगी। मन में यही निश्चय कर लिया कि मैं इन्हीं को गुरु कहूँगी। पहले मेरे यहाँ स्त्री गुरु नहीं करती थीं। मैं गुरु जी को समर्पण कर चुकी थी। पुरानी प्रथा को भूल गई।

शुक्रवार के दिन गीता मन्दिर में सब स्त्रियाँ आती थीं। कीर्तन होता था। मैं भी गई, उस समय मैं कम बोलती थी। सकुचाती थी। कम पढ़ी थी। इससे बोलती नहीं थी। मन में प्रभु के मिलने की बड़ी उत्कण्ठा हो रही थी, श्री विश्नोई जी की स्त्री से मिली। गुरु जी की बातें पूछीं कि साधना किस प्रकार करते हैं। क्या-क्या लगता है। उन्होंने बताया कि ये गुरु जी और गुरुओं की तरह नहीं हैं। कान नहीं फूँकते। कुछ लेते नहीं हैं। सिर्फ मन्त्र बता देते हैं। कुछ बन्धन नहीं है। साधना बड़ी सरल है। मैं प्रसन्न हुई। जैसा मैं चाहती थी वैसे ही गुरु मिल गये।

यह तो मैं जानती थी कि साधु गंगा जी की भाँति होते हैं। गरीब-अमीर सब पर एक दृष्टि रखते हैं। घर बैठे प्रभु ने सोते से जगा दिया। तारा बहिन जी मुझे अपने यहाँ बुला गई थीं कि वहीं

स्वामी जी मिलते हैं। हृदय में मिलने की उत्कण्ठा हो रही थी। पर मन में डरती भी जाती कि कैसे बात करूँगी। जब तारा बहिन के यहाँ गई वहाँ पर साधक मिल रहे थे। मैंने सब विधि पूछी। लजाती मैं स्वामी जी के पास गई। मन में भय सा लगता था। बड़े बुद्धिमान व्यक्तियों से मिलने में साहस कम पड़ता है। मन में यही धारणा थी कि गंगा जी में मूर्ख, सज्जन, बुद्धिमान, गँवार, पापी, धर्मात्मा सब स्नान करते हैं। महात्मा तो माता-पिता हैं। उनसे क्यों शर्माऊँ। मैं चुपके से किवाड़ के पास बैठ गई। जाकर प्रणाम किया। पहले स्वामी जी चरणों का स्पर्श नहीं करने देते थे। स्वामी जी ने बैठने को कहा। आपने मुझसे पूछा कि तुम कुछ भजन करती हो या नहीं। क्या गुरु किये? मैंने धीमे स्वर से उत्तर दिया कि अभी कोई गुरु नहीं किये। फिर गीता, रामायण पढ़ने को पूछा। तब मैंने बताया कि मेरी माँ भक्त थीं। उन्हीं का सत्संग करती रही। रामायण, गीता पढ़ने को कहती थीं सो पढ़ती हूँ। माँ की शिक्षा मिलती रही। यह सुनकर मुझे अपने पास बुलाया, आसन पर बैठने को कहा और आँखें बन्द करने को कहा। जैसे ही मैंने आँखें बन्द कीं उस समय ऐसा आनन्द आया जैसे बिछुड़े सम्बन्धी मिल गये हों। मेरे सिर पर हाथ रखकर यह कहा कि इसी प्रकार प्रातः समय तुम रोज बैठा करना। एक घंटा सुबह और एक घंटा शाम को बैठा करना। मैंने पूछा कि स्वामी जी एक घंटा मैं कैसे बैठ पाऊँगी। तब बताया कि पाँच-दस मिनट बैठकर बढ़ाती जाना। इसी तरह आदत पड़ जायेगी। फिर मैंने कहा कि स्वामी जी मेरे कमर हाथ-पैर में दर्द रहता है। पीठ की रीढ़ में भी दर्द होता है तो आपने बताया कि पाँच-दस मिनट बैठकर बढ़ाती जाना इस प्रकार बैठते-बैठते आदत पड़ जायेगी। और यदि कष्ट हो तो पीछे तकिया रख लिया करो। इससे सहायता मिलेगी जिस तरह भी हो पाँच-दस मिनट अवश्य बैठो। लेटो या बैठो पर राम नाम लेती

जाओ। इसी से सब कष्ट दूर हो जायेंगे। हाथ-पैर का दर्द भी ठीक हो जायेगा। स्वामी जी की आज्ञा को हृदय में रखकर मैंने बैठना आरम्भ कर दिया। आज के दिन तक मैं गुरु जी की आज्ञा को धारण किये हुये हूँ। यही कर्म आगे लिये जा रहे हैं। और कुछ दिनों पश्चात गुरु जी के कहे अनुसार मेरे सब कष्ट दूर हो गये, निरोग भी हो गई। गुरु जी की कृपा बरसने लगी -

सुखद पंथ गुरुदेव यह दीन्हों मोय बताय।
ऐसे ऊपट पाय अब डगमग चले बलाय।।
भ्रम भागा गुरु वचन सुन मोह रहा नहीं लेश।

फिर मैं साधना करने लगी। अब स्वामी जी दुबारा झाँसी आये। मैं उनके पास मिलने गई और उन्होंने सुबह शाम आने को कहा परन्तु मैं बड़ी असमंजस में पड़ गई। मैंने स्वामी जी से कहा कि मैं रोज कैसे आ सकूँगी, मेरे यहाँ परदा बहुत होता है। पति देव कहीं जाने नहीं देते हैं। पतिदेव का मैंने स्वभाव भी बताया तो प्रभु जी ने कहा कि सब ठीक हो जायेंगे। उस समय मैं कम बोलती थी। भगवान की आज्ञा को कौन टाल सकता है। सब कुछ प्रभु को अर्पण कर चुकी थी। साधक को अपने कर्म प्रभु की कृपा समझ कर करने होते हैं। अपना आपा सब छोड़ देना पड़ता है, यही कठिन बात है, परन्तु मैंने पहले की बातें याद करके ध्यान में रखीं। गुरु वाणी ने ऐसी अमृत वर्षा की कि मैं आनन्द प्रेम में मग्न हो गई। सचमुच गुरु वाणी कुछ दिनों में सत्य ही हुई। मैं मन्दिर जाने लगी, कोई कुछ न कहे। गुरु जी ज्ञान के भण्डार थे। मैं बुद्धिहीन बोलने में सकुचाती थी। परन्तु मैं कर्म करने में पक्की थी। गुरु की आज्ञा कभी नहीं टालती थी। जो आज्ञा देते थे वही करती थी। चाहे वह बात गलत हो या सही।

मेरे मन में गुरु जी के प्रति अधिक श्रद्धा थी। मेरे ऊपर प्रभु जी की बड़ी कृपा रहती थी। मैं अपने भाग्य को बहुत सराहती हूँ। जो ऐसे दीनों पर दया दृष्टि कर दी। स्वामी जी की आज्ञा के अनुसार मैं साधना करने लगी और गीता मन्दिर भी जाने लगी। मन्दिर में जाने से मेरी रुचि अधिक बढ़ती गई। अब मुझे ऐसा लगने लगा कि मैं साधना में बैठी रहूँ। दिन में साधना के लिये कई बार बैठती थी। पहले मन्दिर में दोनों समय साधना होती थी और इतवार को 24 घंटे का जाप साधन होता था। उस समय इतना उत्साह बढ़ा कि साधना से तबीयत कभी भरती नहीं थी। मन्दिर की लगन ऐसी बढ़ी कि चाहे मेह बरसे, आँधी चले, धूप हो, सर्दी, गर्मी कुछ भी नहीं सताती थी। मन्दिर का जाना नहीं छूटता था। जैसे ही मेरे मन्दिर जाने का समय होता था, मैं तुरन्त भागती थी। तन बदन का होश नहीं रहता था, मन्दिर के बिना एक दिन भी चैन न पड़ता था। मेरी दशा पागलों के समान थी। प्रभु प्रेम का नशा हर समय चढ़ा रहता था। शरीर में काँटे लगे या चोट लगे कुछ चेतन नहीं रहता था। सिवाय प्यारे राम के कुछ नहीं सुहाता था। घर में यदि कोई दिन जाने को मना करें कि आज आप मन्दिर न जाओ और मुझसे वाद विवाद करें तो मुझे बहुत बुरा लगता था। मन्दिर जाते ही माँ की शक्ति बरसने लगती थी। आनन्द में मस्त रहती थी। कीर्तन अधिक गाया करती थी। कोई समय मुँह नहीं रुकता था। काम करती जाती और भाव कीर्तन के पद गाती रहती थी। भाव में आती तो माँ को पुकारने लगती, कभी प्रार्थना करने लगती, कभी भक्ति की भीख माँ से माँगती। ''अपने से एक कर लो माँ'' यही मेरी पुकार थी। कभी माँ के प्यार में आँसू बहाती थी कभी-कभी भाव के पद गाते या सुनते-सुनते अचेत हो जाती थी। जैसे नदी का प्रभाव वेग से बढ़ता है वैसे ही भक्ति साधना में मेरी दशा पागलों के समान थी।

घर पर सब लोग हँसा करते थे। मैं किसी के हँसने की परवाह न करती थी चुपचाप सुना करती थी, घर में सास ससुर आए तो ताना मारने लगे और कहने लगे कि भजन क्या मन्दिर में ही होता है? क्या घर में भजन नहीं हो सकता है? कभी ये लोग क्रोधित होते थे और मन्दिर नहीं जाने देते थे। परन्तु मुझे तो राम रंग चढ़ा हुआ था। सब द्वन्दों से दूर रहती थी पर किसी न किसी प्रकार मन्दिर जरूर जाती थी। मेरे ऊपर मंगलमयी प्रभु की कृपा दृष्टि थी। माँ की छाया थी। हर कष्टों से माँ बचाती थी। मैंने बड़े-बड़े कष्ट झेले पर माँ को न छोड़ा। गुरु जी के वचन सत्य निकले - श्रद्धा से मन चेतता है और सब कामना पूर्ण होती है। गुरु के द्वारा माँ कहलाती है। स्वामी जी प्रेम अधिक देते थे। मेरे तो गुरु ही भगवान हैं।

स्वामी जी फिर से उपस्थित हुए। राम बाग में साधना का निश्चय हुआ। सब साधक स्वामी जी के पास आये। पूर्णमासी का दिन था स्वामी जी ने चाँदनी की बड़ी प्रंशसा की। साधना में खूब मन लगता है। प्रभु बड़ाई कौन कर सकता है। साधना की पूर्ति के पश्चात प्रसाद के रूप में खीर बाँटी गई। खीर अमृत के समान मीठी (पवित्र) थी। प्रेम धार बह चली जैसे गोपियों का प्रेम कृष्ण के प्रति था। माँ का प्यार खूब मिला, मन में आनन्द प्राप्त हुआ। जैसे माँ का प्यार बालक के लिये फूट पड़ता है। वही निधि हमें मिली। दूसरे दिन मन्दिर गई, साधना में वही दृष्टि गुरु जी की थी, माधुरी मूर्ति चन्द्रमा ज्योति में भगवान की झलक दिखाई पड़ी।

सन् 1949 में मऊ के साधक काशीप्रसाद रईस के पोते का पाटी पूजन था। उन्होंने स्वामी जी को सब साधकों सहित निमन्त्रण दिया। मुझे इस बात का पता न था। प्रात:काल साधना के पश्चात स्वामी जी घूमने जाते थे। उस समय मेरे मन में हुआ कि मैं आज

चलूँ कुछ देर प्यारे राम के दर्शन मिलते रहेंगे। आनन्द भी लेती रहूँगी। बिना राम की आज्ञा के कैसे जाती? संकोचवश अधिक तो नहीं कहा, मैंने केवल यही पूछा कि आपके साथ चलूँ। गुरु जी की मेरे ऊपर कृपा हो गई। गुरु जी ने कहा कि चलना है तो शीघ्र राजपाली के यहाँ आ जाओ। अब मैं असमंजस में पड़ गई तब एक साधक ने समझाया कि मऊ जाना है। मैंने सोचा कि घर में नाराज होंगे तो देखा जायेगा, पर गुरुदेव की आज्ञा को नहीं टालूँगी। ऐसा समय कहाँ मिलता है। प्रभु की कृपा से मतिमन्द, बुद्धिहीन पर ऐसी कृपा हुई। मैं सोचती थी कि शाम तक आ जाऊँगी मैंने किसी से कुछ नहीं पूछा सब दफ्तर चले गये थे। मैं तैयार होकर राजपाली के घर पहुँच गई। राम ने मुझे देखा और हँसे। नौ बजे प्रातः गाड़ी जाती थी। वहाँ दो बजे पहुँचे। दो साधक और तीन व्यक्ति थे। गुरुदेव की कृपा थी तो मुझे वैराग्य की बाढ़ आई। उस समय स्त्री पुरुष का भेद न था। गुरुदेव के सिवाय कुछ ध्यान न था। रईस के यहाँ भोजन का प्रबन्ध हुआ। प्यारे राम ने मुझे अपने पास ही बैठा लिया। उस समय मुझे ऐसा प्रतीत होता था कि माँ के प्रेम में बालक प्रसन्न होता है, वही प्रेम में मैं डूबी हुई थी। मेरे मन कुछ गुरु शिष्य के भाव प्रकट हुये। इस वैराग्य की दशा में जो आनन्द मुझे प्रतीत हुआ उसको मैं अपनी जीभ से कह नहीं सकती हूँ।

गागर में जल बहुत है जो इस विराट संसार रूपी समुद्र में समा नहीं सकता है। भोजन के बाद मौन का समय हुआ। गुरु जी ने आज्ञा दी कि आप सेठानी जी के पास आराम करें। तीन बजे फिर प्रभु जी के पास चली आई। शाम की साधना में हम गुरु जी के साथ सब लोग बैठे। वहाँ हमें बहुत सुन्दर चमत्कार देखने में आया। उसका वर्णन करने में मैं असमर्थ हूँ। कुछ चेत नहीं था शरीर का कि मैं

कहाँ पर हूँ। आनन्द में मस्त थी, कुछ विचित्र सा प्रतीत होता था। उठने का मन नहीं करता था। उस प्रेम में अमृत वर्षा थी अत्यन्त सुख में मैं डूब रही थी। साधना के बाद आवाहन हुआ। सब साधक गण व प्यारे राम भी उठ गये। मैं बैठी ही रह गई। भोले साधक भैया ने मुझ से कहा ''माता जी उठो'' गुरुदेव ने मना किया। कहा कि बैठी रहने दो। थोड़ी देर बाद मैं स्वयं उठी। यह पहले दिन की बात है। दूसरे दिन साधना में ऐसा प्रतीत हुआ कि गुरुदेव मेरे हृदय में समा गये। इस दशा में हृदय में आनन्द ही आनन्द छा गया। घर बाहर की मुझे किसी प्रकार की चिन्ता न रही देश दुनिया की खबर न रही। गोपियों के समान मेरी दशा हो गई। प्रभु की कृपा मेरी समझ में आ गई। मैं बुद्धिहीन हूँ, कैसे वर्णन कर सकती हूँ। सुबह मैंने अपने अनुभव सकुचाते सकुचाते गुरु जी से कहे। प्यारे राम ने मुस्कराते हुये कहा कि यह मस्ती अजीब होती है। यह मस्ती का वाक्य गुरुदेव की स्नेह भरी वाणी ने हृदय में तीर का सा घाव कर दिया। रोम-रोम में शीतलता छा गई। प्यारे राम की विशाल मूर्ति की झाँकी देखते ही देखते मैं दीवानी सी हो गई। गुरु जी के प्रेम भरे जादू से मेरा मन प्रभु की मुखार बिन्दु ज्योति में समा गया। प्यारे राम के दर्शन के बिना मुझे अब चैन नहीं आता था। विचित्र सी दशा थी। दर्शन बिना रहा न जाये। तीन दिन तक मऊ में मैं रही। प्रेम धारा बहती ही रही। रेल में जब स्वामी जी बैठे तब नेत्रों को बन्द किये बैठे मेरी नजर गुरु जी के दर्शनों को करना चाहती थी। गुरु जी के दर्शन से मन तृप्त नहीं हो पाता था। तन-मन गुरु जी को समर्पण कर चुकी थी। पत्र के द्वारा मन के भावों को लिखती थी। कलम रोकने का मन नहीं करे। भावों का प्रवाह इतनी जोरों से आता था कि रुकता ही नहीं था और प्रेम के कारण भावों में बह जाती थी। प्यारे राम भाव का पत्र पढ़कर बड़े प्रसन्न होते थे। गुरु जी के दर्शन मिलते

ही स्वाति बूँद ह्रदय में पड़ जाती थी। प्यारे राम ने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की। जिधर देखती हूँ वहीं पर राम ही राम नजर आते हैं। प्रभु की महिमा याद आती है। ह्रदय गद्गद् हो जाता है।

पहले-पहल मैं बरुआ सागर के कैम्प में गई। मुझे बहुम शर्म लगती थी। हमेशा गुरु जी कहा करते थे कि आप हमेशा ऐसी क्यों बैठी रहती हैं। स्वामी जी के बार-बार कहने से मेरी शर्म छूटी। कैम्प में बहिन रामेश्वरी से खुल के बातें करती थी। मन ही मन मैं बहुत सकुचाती थी। मेरी अधिक बोलने की आदत नहीं थी। इससे मैं कुछ कह नहीं पाती थी। एक दिन मैंने बहिनजी से पूछा आप गुरु जी से बोल लेती हैं क्या? और मन के भावों को प्रकट कर लेती हैं? मुझे तो बहुत संकोच लगता था और अपने मन की भावनायें किसी के समक्ष व्यक्त नहीं कर पाती थी। कभी कभी मैं अपनी मूर्खता पर रो पड़ती थी। बहिन जी ने मुझे धैर्य दिलाया। जैसे-जैसे कैम्प में मैंने जाना शुरु किया। मेरी स्थिति बदल गई, स्वभाव में भी परिर्वतन आ गया। भावों को तो पत्र में लिख लेती थी परन्तु किसी के सामने बोलने में हिचकिचाहट लगती थी। कैम्प में सबका काम बाँटा गया। मुझे कमरे की सफाई का काम सौंपा गया। जिस दिन कैम्प की पूर्ति हुई, सब साधकगणों ने श्रद्धाँजलि अर्पित की। रामेश्वरी बहिन ने गुरु जी के चरण स्पर्श कर लिये। मैनें ज्यों ही गुरु जी के चरण छुये त्यों ही गुरु जी ने मेरे चरण छू लिए। मुझे बहुत लज्जा प्रतीत हुई। स्वामी जी गुलाब के पुष्प की प्रभु की महिमा को निहार रहे थे। यह दृष्टि मेरी आँखों में भर गई। प्रभु की रचना का ज्ञान मुझको प्राप्त हुआ। स्वामी जी के दर्शनों को प्राप्त करके मैं सब बातों को भूल जाती थी। राम की मूर्ति माधुरी को देखकर प्रेम में मुग्ध हो जाऊँ। पूर्ति के दिन गुरु जी का शरीर काँपता रहा। गीता के क्लास

में गीता पढ़ी गई और बाद में राम नाम की महिमा पढ़ी गई। गुरु जी के मुँह से राम नाम की महिमा सुनने में अत्यधिक आनन्द प्राप्त हुआ। राम नाम की महिमा मेरे रोम रोम में बिंध गई थी। कैम्प के पश्चात राम मन्दिर की बगिया में साधना हुई। प्रभु जी रामायण पढ़ते थे, तब ऐसा प्रतीत होता था कि रामचन्द्र जी राज्य-तिलक के पश्चात नगर वासियों को उपदेश दे रहे हों। कैम्प की छटा बसी रही। इस प्रकार मुझे कई अनुभव होने लगे। फिर दूसरे कैम्प में गई। वहाँ मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि सारे शरीर में बिजली की धारा का प्रवाह हुआ हो। जैसी बैठी थी वैसी ही रह गई। उठने को मन नहीं करता था। कुछ समय पश्चात शक्ति का वेग कम हुआ, मैं उठ बैठी और बालकों की तरह मुझे हँसी आती रही। उस समय ऐसा विदित होता था कि मैंने भाँग खा ली हो। हँसी के पश्चात अश्रुपात भी होने लगा। पद में भाव प्रकट होने लगे। माँ को ही पद सुनाती व विनय करती रही।

स्मरण सदैव रहता था। एक दिन धूप में लेटी थी। एकाएक मुझे एक गोलाकार चमकदार वस्तु दिखाई दी। पहिले लाल रंग की और उसके बाद नीला, पीला रंग उसमें भगवान की मूर्ति ऊपर से चारों तरफ फूलों की बरसात हो रही हो। रोशनी में ऐसा प्रतीत होता था कि मैं सिनेमा देख रही हूँ। कई रंग दिखते थे, परन्तु साधना में आम तौर से लाल रंग दिखाई देता था। बाद में नीला रंग तथा उसमें भगवान की मूर्ति दिखाई दी।

तीसरे कैम्प में विचित्र घटना हुई। मैं भाव के पदों को सुनकर रो पड़ती थी। हमेशा दुखी रहने लगी। प्रभु दर्शन की प्यास थी। पागलों के समान मेरी दशा हो गई थी। कुछ भी मुझे अच्छा नहीं मालूम होता था। कहीं भी जाती तो राम नाम की रट तथा ध्यान करने का मन होता था। कैम्प से आने के पश्चात हर एक को देखने

में ऐसा प्रतीत होता था कि सर्व सम्पन्न भगवान ही भगवान हैं। जानवरों को देखूँ तो प्यार करने को जी हो। कोढ़ी, अपाहिजों को देखने पर दया के कारण और प्रभु समझकर सिर झुका लेती थी। मन्दिर मस्जिदों के आगे स्वयं सिर झुक जाता था। यही नशा सदैव बना रहा। पुस्तकों को पढ़ने में रात दिन मन लगा करता था। खाली समय में पद गाया करती थी। स्वामी जी को पत्रों में मैं अपने पागलपन की दशा लिखती थी। अधिकतर साधुओं के योग दर्शन तथा भक्तों की कथाओं को पढ़ती रहती थी। प्रभु की मेरे ऊपर अत्यधिक कृपा थी। आरती करते समय कभी-कभी खड़े से गिर पड़ती थी। शक्ति का वेग रोकने से रुकता नहीं था। साधना में बैठते ही चेत नहीं रहता था। राम के प्रेम में मस्त रहती थी।

चौथे कैम्प में मैं अपने कमरे में गई। साधना में एक दम राम दर्शनों की तड़प थी। राम से मिलने के लिये हृदय में उत्कंठा होने लगी। मेरा शरीर बैचेन होने लगा। पूरा समय काफी कठिनाई से व्यतीत हुआ। साधना से जब मैं आई तो लेट गई। लेटने से मुझे आराम न मिला और राम के दर्शनों की उत्कंठा बढ़ती रही। राम की लगन में पागल सी हो गई। मीराबाई आदि भक्तों की कहानी याद आती थी। एक बहन जब कुछ समय पश्चात साधना से लौटी तो उन्होंने मेरी अवस्था को देखकर मुझे समझाया। लेकिन मेरा रोना बन्द न हुआ। मन में कई भाव उठे और मैं सोचती थी कि हम पापियों को भगवान दर्शन क्यों देंगे। मेरी इतनी साधना नहीं जो मैं भगवान के दर्शन शीघ्रता से कर सकूँ। यह सोचते हुये मैं खुले आँगन में पड़ी रही। किले के नीचे तालाब था। मन में ऐसा प्रतीत होता था कि भगवान तालाब में से आ रहे हों। दर्शनों की प्रतीक्षा कर रही थी। मन में ऐसा लग रहा था कि गुरु जी के पास चली जाऊँ शायद

शान्ति मिले। परन्तु डर के कारण जाना उचित न समझा। बोलती भी कम थी। कुछ बिजली के जलने की आहट हुई, मैं चौकन्ने हो गई। स्वामी जी सब साधकों को उठाने के वास्ते आये थे और इसके पश्चात शौचालय में चले गये। जब स्वामी जी को पुकारा और वह मेरी पुकार सुन कर रुक गये। मैंने चरण स्पर्श किया और बाद में मुझे कुछ भी चेत न रहा। स्वामी जी खड़े रहे। स्वामी जी ने मुझे नाम लेकर पुकारा परन्तु मैं बेहोश थी। गुरुदेव ने मेरी नब्ज देखी। दो साधकों को स्वामी जी ने बुलाया और कहा कि इन्हें बिस्तर पर लेटा दो। कुछ समय पश्चात मुझे होश आया। सर्दी के दिन थे। राम से मिलने की लौ सदैव मन पर सवार रहती थी। स्वामी जी से मैं वैसे बहुत डरती थी। लेकिन अब मैं प्रेम के विवश होकर उनसे नि:संकोच बोलने लगी। पत्र के द्वारा भाव प्रकट करने लगी। गुरु जी का आशीर्वाद मिल चुका था। गुरु जी की सदैव कृपा रहने लगी थी। स्वामी जी से मैंने पूछा कि मेरा अब आपके साथ रहने को जी चाहता है। तो स्वामी जी ने कहा कि अल्मोड़ा कैम्प में आना। वहाँ साथ रहने का मौका मिल जायेगा, मेरे मन की बात को जानने वाले प्रभु ने पुकार सुन ली।

अल्मोड़ा मैं बड़ी कठिनता से जा पाई, वहाँ जाने की अधिक लगन लगी थी। मन की सच्ची लगन माँ पूरी कर देती है। भावों से मेरा मन सदैव भयभीत रहता था। शक्ति का वेग दिन प्रतिदिन बढ़ता जाता था। अल्मोड़ा जाने में रास्ता हँसी-हँसी से कट गया। जाने में बड़ी प्रसन्नता हो रही थी। मन में ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे अयोध्या में चित्रकूट, नगरवासी गये थे वही दृश्य मेरे सामने आ रहा था। रास्ते में एक वृद्ध सज्जन मिले, उनसे पूछा स्वामी जी का स्थान कितनी दूर और है। उसने हमें हाथ से इशारा करके बताया

कि पास ही में है। प्यारे राम के दर्शनों की अभिलाषा में तीव्रता आ रही थी। भाव में वह व्यक्ति ऐसा प्रतीत होता था जैसे श्री भरत जी को केवट ने भगवान राम का स्थान बताया था। अब मैं प्रभु के समीप पहुँच गई। स्वामी जी के दर्शन किए और मन को शान्ति मिली। ''निर्धन को कुबेर का खजाना मिल गया'' यही दशा मेरी भी थी। चरण स्पर्श किया। स्वामी जी ने सबकी कुशल पूछी। अल्मोड़ा कैम्प में 45 व्यक्ति एकत्रित हुये थे। स्नानादि के पश्चात शाम को साधना में बैठे। साधना में बैठते ही आनन्द इतना उमड़ पड़ा कि मैं अपनी इस पवित्र लेखनी से कैसे लिखूँ। मेरी खुद में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि गुरु जी की महिमा का वर्णन कर सकूँ। सबको माँ का प्यार मिला। सब साधकगणों के मन में मधुर प्रेम का प्रवाह बहता था। गुरुदेव सब में रुचि रखते थे। जिस प्रकार माँ बालक से प्रेम करती है उसी प्रकार स्वामी जी का प्रेम था ऐसे प्रभु के दर्शन मिलना कठिन है। गुरुदेव हम सबको प्रेम दान दे गये। साक्षात भगवान के प्रतीक थे। हम लोगों के भाग्य थे जो सदैव दर्शन मिलते रहे। अब कैम्प का समय खत्म होने के लिये पास ही था। मन प्रेम में विरह से व्याकुल होने लगा। गुरुदेव बिना चैन न मिले। मैं बहुत परेशान रहने लगी कुछ साधक स्त्रियाँ मुझे मिलने के लिए मना कर दें वह कहती थी कि स्वामी जी को तकलीफ होती है। मैंने बहुत प्रार्थना की मुझे दर्शन कर लेने दो मैं न बोलूँगी न पूछूँगी। मैं स्वामी जी के पास गई लेकिन चुपचाप बैठी रही। गुरु जी पत्र लिख रहे थे। मैं चुपचाप दर्शन करती रही आनन्द में रस पीती रही। एक दिन स्वामी जी, साधिका तारा बहिन से बातें कर रहे थे। मैं उनके पास ऐसी गई जैसे कि पतिंगा किसी दीपक पर गिरता है। उस दिन मैं खूब परेशान थी। मेरी आँखों से प्रेम की बूँद टपक पड़ी। यह गुरु जी ने देखा और मुझे अपने पास बैठा लिया। पूछा कि ''तुम्हें क्या

चाहिये?'' मेरे मन की बातों को जानने वाले गुरु जी ने मेरी पीठ में एक घूँसा मारा। यह घूँसा क्या था? प्रेम भक्ति का प्रसाद था। उस दिन से मेरी भक्ति बढ़ गयी। एक दिन मैं साधना में बैठी तो यकायक हृदय में घबराहट हुई और ऐसा लगा कि मेरी नाक में सूत के समान छेद हो गया है। उस समय कुछ चेत नहीं था। बाद में आनन्द की वर्षा से शान्ति मिली। मैंने सुबह गुरु जी से कहा। उस दिन से प्यारे गुरु राम की जय जयकार भोजन के समय बोलने लगे। कभी गुरु जी मुझे आनन्दमयी के नाम से पुकारते थे।

अल्मोड़ा का वातावरण इतना स्वच्छ था कि हर समय शक्ति का वेग और प्रेम का प्रवाह होता रहे। साधकों में आपस में इतना प्रेम बढ़ गया था कि सँभाले सँभलता नहीं था। प्रत्येक की आँखों में आँसू की धारा का प्रवाह होवे। चलते समय सब साधकगण प्रेम के वशीभूत हो गये और गुरु जी व अन्य साधकगणों को छोड़ने में दुखी होने लगे। यह दशा अयोध्यावासियों जैसी हुई। जब अयोध्या लौटने लगे तो रामचन्द्र जी सबको समझाते हुये विदा कर देते हैं। क्योंकि नगर वासी प्रेम के वशीभूत थे। इसी प्रकार स्वामी जी सब साधकों को समझाते थे। न मालूम इतना प्रेम कहाँ से उमड़ पड़ा। अल्मोड़ा तो स्वर्ग जैसा प्रतीत होने लगा, प्रत्येक में राम ही राम दिखाई देने लगे। अल्मोड़ा से आने को मन नहीं करता था।

जब से अल्मोड़ा से आई तब से रोम रोम में राम रम गये। फिर मैं बरुआ सागर के कैम्प में गई। वहाँ प्रेम लहरों के ऊपर प्रेम लहरें आयें सारा शरीर प्रेम में भीगता रहे। माँ की कृपा दृष्टि अधिक थी। रोम रोम में भगवान राम की आवाज कानों को सुनाई देती थी। मैं पागल सी हो गई। घर मुझे अच्छा नहीं लगे बस मुझे ऐसा लगता था कि स्वामी जी के पास सदैव रहूँ। गुरु जी की मूर्ति आँखों में

हमेशा बसी रहे। मीरा के समान मेरी भी दशा थी। छोटेपन में सोचती थी कि मीरा कैसे रोती होगी। अब मैं अपने स्वयं से अनुभव करने लगी। राम नाम के प्रेम की जैसी महिमा सुनती थी अब मैं समझ गई। अब संसार सपने के समान दिखता है। सारे पदार्थ राम नाम की महिमा के आगे फीके थे। राम से मिलने की चाह जब मन में होवे तो गुरु जी के चरण स्पर्श करने से मुझे शान्ति मिल जाती थी। राम नाम सुनते ही बैचेनी होने लगती। जबसे अल्मोड़ा से आई तो शक्ति बहुत ही क्षीण होती जा रही थी, अनुभव भी बहुत बढ़ गये थे, भावों से सदैव भरी रहती थी। अनहद ध्वनि का नाद भी मुझे सुनाई देने लगा। मैं तो जानती नहीं थी। हमेशा कानों में आवाजें कई प्रकार की आती थीं। मैं मन में सोचती थी कि मैं कहीं बहरी न हो जाऊँ। कभी मुझे बादलों की आवाज, कभी चक्की की और कभी झींगुर की आवाज सुनाई देती थी। मन मेरा इन्हीं आवाजों को सुनता रहता था। तब मैंने स्वामी जी को लिखा तो स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मैं स्वयं आ रहा हूँ और आकर मैं देखूँगा तब मैं इलाज बताऊँगा। गुरु जी किसी कारणवश न आ पाये। इसी बीच मेरी बड़ी बहन ने यह बात सुनी तो उन्होंने समझाया कि यह तो अनहद ध्वनि होती होगी। अब मैं भ्रम में पड़ गई। मैंने कई महात्माओं से पूछा उन्होंने भी यही उत्तर दिया। फिर मैंने पुस्तकों का अध्ययन शुरू किया उसमें भी यही लिखा था। सन्तवाणी में मन लगने लगा। मैंने स्वामी जी को पुनः लिखा तो उन्होंने लिखा कि कभी कभी अनहद ध्वनि होने लगती है। अब मुझे कुछ विश्वास हुआ। कभी-कभी मेरी माता जी की भी ध्वनि पर ध्यान गया और प्रेम बढ़ा। प्यारे राम-राम माँ माँ पुकारने लगी। हृदय में दर्द भी होता रहा। प्यारे राम के वियोग में अकुलाती रही। अन्दर मन में ऐसी-ऐसी वेदना हुई उस समय यह दोहा याद आया:-

डगमगायें पैर मृदु, लचके कोमल गात।
निज पथ पर कर पकड़ कर, ले चल मुझको मात॥

भाव से यह उठा कि माँ ने मेरा हाथ पकड़ लिया। माँ-माँ करती रोती फिरूँ और मन में धैर्य रखूँ। प्रातः समय साधना में अब शक्ति नहीं थी। माँ से सदैव प्रार्थना करती थी कि मेरे सारे विकारों को दूर कर दें। उस समय का आनन्द कैसे लिखूँ। अमृत पीती रहती थी। माँ के सहारे पर रहती हूँ।

अब मैं बरूआ सागर कैम्प में फिर गई। प्रेम अधिक बढ़ता ही गया। सारे शरीर में प्रेम की लहरें उठा करें जैसे कि पानी की बाढ़ आती हो। सारा शरीर प्रेम से पागल हो जाता था। कभी कभी मेरा हृदय काँप उठता था। माँ से प्रार्थना करती थी कि मेरे विकारों को दूर कर दें। एक वर्ष तक यही दशा रही। माँ से कहा करती थी कि मेरे अहंभाव को दूर कर दे। एक बार स्वामी जी पुनः एक साधक के यहाँ आये। उस समय मन्दिर की रचना का कार्य चल रहा था। उसे देखने आये थे। एक बार फिर से सब साधकगणों को मिलने का मौका स्वामी जी से मिल गया। स्वामी जी से जब मैं मिलने जाती थी तो कहीं न कहीं निकल ही जाया करते थे। इस क्रम को होते हुये दो या तीन दिन हुये थे। इस प्रकार रोज मन मार कर रह जाती थी। साधना के समय की व्यथा को लिखकर ज्योति के सामने रख आती थी। चौथे दिन मैं स्वामी जी से मिलने गई तो स्वामी जी घूमने चले गये थे लेकिन उस दिन मैं घर नहीं लौटी। प्यारे राम के आने की राह देखती रही। परन्तु नहीं आये। साधकगण की धर्मपत्नी ने कहा आसन को सिर टेक कर चली आओ। तब मैंने ऐसा ही किया और चली आई। फिर शाम को पुनः गई तो प्यारे राम नहीं थे परन्तु कुछ देर बाद आ गये। मैं जिस प्रकार से कि

भूखा बछड़ा गाय को देखकर दौड़ता है, मैं लाज को तोड़कर गुरु जी के पास जा खड़ी हुई। प्यारे राम ने हँस कर कहा कि मैं तुमसे जान बूझकर नहीं मिला। दूसरे दिन स्वामी जी से पुनः मिली तो प्रेम शक्ति के कारण मुँह से बोल नहीं पाई। स्वामी जी के चरणों में सिर रख कर रह गई। गुरु जी की मेरे ऊपर काफी अच्छी कृपा दृष्टि थी। न मालूम उस जन्म के मेरे क्या संस्कार थे। जो गुरु जी की इतनी कृपादृष्टि थी। मेरे कर्म इतने अच्छे नहीं थे। भाव से माँ से सदैव यही भीख मांगती हूँ कि मुझे सदैव प्रेम भक्ति मिलती रहे। मैं गुरु जी की बड़ी आभारी हूँ। जो मुझ सी बुद्धिहीन को शरण में ले लिया। जबसे प्यारे राम मिले तब से शान्ति मिलने लगी।

पुनः मैं इलाहाबाद के कैम्प में गई। प्रेम के वियोग में सदैव व्याकुल रहती थी। वह अब कुछ कम है अब तो आनन्द में मग्न रहती हूँ। सब खेल समाप्त हो गये, हर समय राम ध्वनि कानों में होती रहती है। आगे पीछे की बातें पूर्णतः याद नहीं हैं। गुरु जी ने क्या क्या आनन्द हम लोगों को दिये। गुरु की महिमा का बखान मैं कहाँ तक करूँ। गुरु जी का ध्यान करते ही आँसुओं का प्रवाह उमड़ने लगता है। सब गृहस्थी के काम प्रभु सेवा समझ कर करती हूँ। प्यारे राम ने प्रेम करना सिखाया। वही प्रेम मुझे हर एक में झलकता है। सब कर्म बन्धनों से मुक्त हैं। नाटक की भाँति कर्म करती हूँ। संसार सिनेमा जैसा प्रतीत होता है। दुनिया में कोई वस्तु वास्तविक नहीं है। मेरे मायाजाल में फंसने के पश्चात मेरी दीन हीन दशा को सुधार दिया अर्थात कृपा कर दी।

भक्ति पदारथ तब मिले, जब गुरु होय सहाय।
प्रेम भक्त, की भक्ति, जो पूर्ण भाग मिलाय।।

आपकी आनन्द मई